नरेन्द्र मोदी का उदय– कितनी आवश्यकता कितनी मजबूरी

आवश्यकता और मजबूरी को अलग अलग परिभाषित करना बहुत कठिन कार्य हैं। वैसे ही आवश्यकता को अच्छे अर्थो मे लिया जाता है और मजबूरी को बुरे अर्थो मे। एक भूखे व्यक्ति के लिये रोटी उसकी आवश्यकता मानी जाती है और रोटी के लिये चोरी करना उसकी मजबूरी मानी जाती है। आवश्यकता और मजबूरी पर चर्चा करते समय यह बात भी ध्यान मे रखी जाती है कि हमारा उददेश्य क्या है। यदि उददेश्य बदल जाता है तब आवश्यकता और मजबूरी आपस मे बदल भी जाया करती है।

हम भारत के राजनीतिक धठनाक्रम पर विचार करें। पिछले सरसठ वर्षों से भारत में लोकतंत्र कहा जाता है। जबकि भारत मे प्रारंभ से ही प्रदूषित लोकतंत्र रहा है, आदर्श नही। भारत का लोकतंत्र जनता से जनता के लिये तो काम करता रहा है। किन्तु लोकतंत्र जनता के द्वारा कभी भी चलने की शुरूआत नही कर सका। हम यदि स्वतंत्रता के बाद भारत के लोकतंत्र की समीक्षा करे तो हम देखते है कि पंडित नेहरू ने भारत के लोकतंत्र के साथ सबसे अधिक धोखा किया। उन्होने भारत में लोकतंत्र का ऐसा ढांचा तैयार किया कि भारत का लोकतंत्र कई पीढियो तक एक परिवार तक सिमट कर रह गया। आज भारत के लोकतंत्र की यह दुर्दशा है कि वह कुछ व्यक्तियों के गिरोह के रूप मे स्थापित हो गया है और भविष्य में भी नये– नये राजनैतिक गिरोह बनने की परम्परा जारी रहेगी। आज यदि देखो तो एक गिरोह सोनिया गांधी का है जो केन्द्र पर कब्जा जमाये रहा है। तो दूसरी ओर मुलायम सिंह, लालू प्रसाद, राम विलास पासवान, मायावती, जयललिता, करूणा निधि, ममता बनर्जी सरीखे लोग प्रदेशो मे अपनी– अपनी दुकान खोले हुए है। और उन दुकानो का नाम किसी दल के रूप मे रखकर लोकतंत्र को धोखा देते रहते हैं। जनता दल यू और भारतीय जनता पार्टी ही ऐसे दल बचे है जिन्हे किन्ही व्यक्तियो के व्यक्तिगत गिरोह नही कहा जा सकता। नवीनतम चुनावों के बाद भी दुकानदारी के गिरोह अपने– अपने मालिक के नेतृत्व में ही चिंतित है सहभागी के रूप मे नहीं।

सरसठ वर्षो से भारतीय लोकतंत्र ने एक और संदेश दिया है कि भारत मे मुसलमान संगठित है और लोकतंत्र का उपयोग करने में उसकी सबसे अधिक भूमिका है। भारतीय जनता पार्टी को छोडकर बाकी सभी राजनीतिक दल यह अच्छी तरह समझते है कि मुसलमान जिस गिरोह को चाहेगा वही सत्ता मे आ सकता है। अन्यथा नही। जो बात सभी राजनीतिक दल समझते है वह बात आम मुसलमान भी समझता है कि वे जिसे चाहेगे वही सत्ता मे आयेगा और इसलिये भारत के मुसलमानो ने एक जुटता के बल पर अन्य धर्मावलंबियों को राजनीतिक अधिकारों के मामले में दूसरे दर्जे का नागरिक बना दिया। यहां तक कि बडी बेशर्मी से सोनिया जी ने अपने गिरोह मे प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह से यह घोषित करवा दिया कि देश के संसाधनो पर मुसलमानों का पहला हक है। भाजपा टरटराती रही लेकिन अन्य राजनीतिक दलो ने इस निर्लज्ज घोषणा का भी स्वागत किया। मैं तो यहां तक मानता हूॅं कि भारत के मुसलमानों को अपनी एक जुटता का घमंड था और वे सरसठ वर्षों से लगातार भारत के लोकतंत्र को ब्लैकमेल करते रहे। मुजफ्फर नगर दंगो के बाद मुलायम सिंह ने जिस तरह वोट की खातिर मुस्लिम साम्प्रदायिकता को बढावा दिया उसने भी वर्तमान चुनावों मे आग मे घी का काम किया।

सन सैंतालीस के बाद ही भारत का लोकतंत्र जिस दिशा मे आगे बढा उसके परिणामस्वरूप भारत में अव्यवस्था बढती चली गयी। प्रारंभ से ही भारतीय लोकतंत्र को साम्यवादी शासन पद्धति के साथ इस तरह जोडा गया कि न यहां तानाशाही आयी और न लोकतंत्र रहा। बल्कि दोनों के संयोग से एक नयी व्यवस्था आयी, जिसे हम अव्यवस्था कह सकते हैं। यह अव्यवस्था निरंतर बढती ही चली गयी। वर्ग निर्माण, वर्ग विद्वेश और वर्ग संघर्ष तक ले जाना राजनीति का खेल बन गया। महिलाओं को वर्ग के रूप मे खडा किया गया, मजदूरों व किसानों के भी वर्ग बनाये गये, धर्म–जाति, भाषा व क्षेत्रीयता के नाम पर बने हुए वर्गो को प्रोत्साहित किया गया। वर्ग समन्वय के प्रयास को पूरी तरह अछूत बना दिया गया। शराफत की जगर चालांकी और चालांकी की जगह धूर्तता बढती चली गयी। सम्पूर्ण समाज को यह समझा दिया गया कि लोकतंत्र ऐसा ही होता है और लोगो को इस प्रदूषित लोकतंत्र मे ही संतुष्ट रहने की भूख पैदा कर दी। मैं जानता हूॅं कि संघ परिवार इन प्रयत्नों से बिल्कुल अलग था किन्तु संघ परिवार भी इस दूषित लोकतंत्र को एक लाभदायक स्थिति के रूप मे देख रहा था क्योंकि संघ परिवार को पता था कि बढती हुई अव्यवस्था तानाशाही की भूख पैदा करती है, मुसलमानो का घमंड हिन्दुओं में अतर्ग्लानि का भाव भरता है।

जितना ही प्रदूषित लोकतंत्र बढेगा उतना ही संघ की आवश्यकता महसूस होगी और वही हुआ। नरेन्द्र मोदी और संघ ने मिलकर इस प्रदूषित लोकतंत्र को धूल चटा दी। सभी गिरोह अलग–अलग अथवा एकजुट होकर भी इस आंधी को नही रोक सके। मोदी संघ के नेतृत्व में प्रधानमंत्री बन गये।

यदि हम लोकतंत्र के वर्तमान स्वरूप पर विचार करें तो हमे वर्तमान परिवर्तन एक आवश्यकता के रूप में दिखता है। किन्तु यदि हम आदर्श लोकतंत्र की परिकल्पना करें तो यह परिवर्तन आवश्यकता नही थी बल्कि मजबूरी थी। नरेन्द्र मोदी और संघ के संयोग से आने वाला लोकतंत्र तानाशाही की तरफ बढने की अधिक संभावना है। किन्तु सरसठ वर्षो से लोकतंत्र के नाम पर जो कुछ परोसा जा रहा था उससे मुक्ति आवश्यक थी और यही कारण है कि हमारी मजबूरी भी आवश्यकता में बदल गयी। मैं स्वयं सब कुछ समझते हुए भी अंततोगत्वा नरेन्द्र मोदी की हवा मे बह गया, क्योंकि इसके अतिरिक्त मुझे कोई अन्य मार्ग नहीं दिखा। मैं अच्छी तरह समझता था कि मनमोहन सिंह प्रधानमंत्री के रूप में सबसे अधिक लोकतांत्रिक रहे हैं। नीतिश कुमार से भी लोकतंत्र के ठीक दिशा मे जाने की अच्छी संभावना थी । अरविन्द्र केजरीवाल भी कुछ विश्वास पैदा कर रहे थे किन्तु मनमोहन सिंह को परिदृश्य से बाहर कर दिये जाने के कारण नितीश कुमार मुसलमानों की ओर आंशिक रूप से झुका होने के कारण तथा अरविन्द केजरीवाल सांगठनिक क्षमता की कमी के कारण जब असफल होते दिखे तब विकल्पहीनता की स्थिति मे नरेन्द्र मोदी ही एक मात्र समाधान दिख रहे थे। आज से पांच वर्ष पहले ज्ञान तत्व अंक 178, 16 से 30 जून 2009 में मैने स्पष्ट लिखा था कि नरेन्द्र मोदी मे प्रधानमंत्री बनने की सभी योग्यताएं मौजूद हैं। ज्ञान तत्व अंक 212, 1 दिसम्बर से 15 दिसम्बर 2010 में मैने साफ लिखा है कि वर्तमान समय मे मनमोहन सिंह सबसे अच्छे प्रधानमंत्री बनने के योग्य है उसके बाद नितीश कुमार का क्रम आता है और यदि ये दोनो नहीं होते तब नरेन्द्र मोदी प्रधानमंत्री बनने चाहिये, ज्ञान तत्व अंक 215, 16 जनवरी से 31 जनवरी 2011 में ज्ञान यज्ञ परिवार के वार्षिक सम्मेलन की रिपोर्ट छपी है। उस सम्मेलन में मैने अच्छे लोगो की जो सूची प्रस्तुत की थी उसमे मनमोहन सिंह, सोनिया गांधी, पी. चिदम्बरम, नितीश कुमार, नरेन्द्र मोदी, बुद्वदेव भटटाचार्य, अच्युतानन्दन, रमन सिंह, शिवराज सिंह चौहान, शीला दीक्षित, बाबूलाल मरांडी तथा नवीन पटनायक के नाम थे। इसके विपरीत सूची में लालू यादव, राम विलास पासवान, मायावती, मुलायम सिंह, शिबु सोरेन, ममता बनर्जी, अजित जोगी, प्रकाश करात, करूणा निधि, जयललिता, स्वामी अग्निवेश के नाम थे। मैं समझता हूॅ कि सोनिया गांधी को छोडकर बाकी सब लोग आज भी उस सूची मे यथावत् हैं। सोनिया गांधी ने भी पुत्र मोह में अपना रिकार्ड खराब किया है। अन्यथा अन्य मामलो मे उस पर कलंक नही लगा है। ज्ञान तत्व अंक 217, 16 फरवरी से 28 फरवरी 2009 में मैने नरेन्द्र मोदी के संबंध में और स्पष्ट किया है। उसके बाद अंको में जब अरविन्द केजरीवाल चर्चा मे आये, तब मैने कई बार लिखा कि मेरी पहली पसंद मनमोहन सिंह है। दूसरी पसंद नितीश कुमार है तीसरी पसंद अरविन्द केजरीवाल हैं और यदि ये तीनो कमजोर हों तो चौथी प्राथमिकता नरेन्द्र मोदी हैं। मैने कई बार लिखा है कि किसी भी परिस्थिति में कांग्रेस को कोई वोट देना अत्यन्त घातक हैं। मैं तो यहां तक चाहता था कि कांग्रेस पार्टी को एक भी सीट न मिले यद्यपि उन्हें कुछ सीटें मेरे न चाहते हुए भी मिल गयी। इस तरह मेरी इच्छा तो यह थी कि मनमोहन सिंह, नितीश कुमार, अरविन्द केजरीवाल आज की राजनीतिक आवश्यकता हैं किन्तु आवश्यकता यदि मजबूरी मे बदलती हो तो सबसे अच्छा विकल्प नरेन्द्र मोदी हीं हैं। हम गत 67 वर्षो से जिस कुऐं में पड़े हुए हैं उससे निकलकर यदि किसी खाई का भी खतरा दिखता हो तो खतरा उठाना चाहिये। भारत की जनता ने कुऐं से निकलने का विकल्प चुनकर बहुत अच्छा कार्य किया है। हम तो चाहते है कि भविष्य में इससे भी अच्छे प्रयत्न किये जायें। मै महसूस करता हूॅ कि सोनिया गांधी को भी यथार्थ् का अनुभव होना चाहिये था। सोनिया जी ने एक भले आदमी मनमोहन सिंह को पुत्र मोह में बदनाम करने मे कोई कसर नही छोडी। सोनिया जी ने विपक्ष की नेता सुषमा स्वराज से मिलकर मनमोहन सिंह को बदनाम किया। दोनों के अपने –अपने स्वार्थ थे। सोनिया चाहती थीं कि मनमोहन बदनामी के डर से चुपचाप राहुल का रास्ता साफ कर दें तो सुषमा चाहती थीं कि मनमोहन सिंह कमजोर होकर भाजपा की ओर से उनका रास्ता साफ करें। मैने ज्ञान तत्व में दोनों की मिलीभगत का कई बार जिक्र किया है। देश की जनता ने दोनो को सबक सिखा दिया। सोनिया गांधी अपने पुत्र– पुत्री के साथ एक तरफ आंसू बहा रही है तो सुषमा स्वराज दूसरी तरफ नाराज बैठकर किसी तरह अपने को संभाले हुए हैं। सोनिया गांधी ने मनमोहन सिंह को कमजोर करने मे गुप्त रूप से वामपंथियों की भी मदद ली । इन्होने राष्ट्रीय सलाहकर परिषद् में

अव्यावहारिक वामपंथियों को रखकर देश की अर्थव्यवस्था को चौपट किया,। यह कार्य किसी अच्छी नीयत से नहीं हो रहा था, भूलवश भी नही हो रहा था न इसकी आवश्यकता थी, न मजबूरी किन्तु पुत्र– मोह ने सोनिया जी की आंखो पर पर्दा डाल दिया था 'अब पछताये होत क्या जब मोदी चुग गये खेत।'

1जनसत्ता 14 अप्रैल, 2014: सुजाता पारमिता

विचार–स्त्री सरोकारों के प्रति डॉ. भीमराव अंबेड़कर का समर्पण किसी जुनून से कम नहीं था। छियासी साल पहले, 28 जुलाई 1928 के दिन, उन्होनें बंबई विधान परिषद में स्त्रियों के लिये प्रसूति से जुडें, पहलुओं से संबंधित एक महत्वपूर्ण विधेयक पेश किया था। उसका जोरदार समर्थन करते हुए उन्होनें यह कहा था कि यह देश हित में है कि मां को बच्चे के जन्म के दौरान आराम मिले। सरकारी और निजी, दोनों क्षेत्रों के अंतर्गत आनेवाले तमाम कारखाने, खदान या ऐसे सभी उपक्रम जहाँ भारी संख्या में स्त्री मजदूरी करती हैं और जो खतरनाक है, जिनमें काम करना उनके लिये जानलेवा भी सिद्ध हो सकता है, यह उनकी जिम्मेदारी है कि वे इस खर्च को वहन करें, क्योंकि वे स्त्री श्रमिकों को तभी काम पर रखते हैं, जब उन्हें इससे ज्यादा फायदा होता है। इस विधेयक का मुख्य आधार अन्य सुविधाओं के साथ महिला श्रमिकों के लिये वेतन समेत छुट्टियों का प्रावधान था।

इसके बाद अंबेड़कर ने बंबई विधान परिषद् में पीजे रोहम् द्वारा नवंबर, 1938 में जनसंख्या नियंत्रण विधेयक के रूप में एक एतिहासिक विधेयक पारित करवाया। उस विधेयक ने मनु के सदियों से चले आ रहे उस दर्शन को ध्वस्त कर दिया, जिसमें स्त्री को एक ऐसे गुलाम के रूप में जीने को कहा गया था जिसका अपनी हीं देह और कोख पर अधिकार न हो। उस दर्शन के मुताबिक उसका जन्म स्त्री के रूप में इसलिये हुआ है कि वह पुरूष की सेवा करे, उसे तृप्त करे और बच्चे पैदा करने का साधन बनी रहे। यह सिद्धांत सदियों से भारतीय स्त्रियों की भयानक स्थिति के लिये जिम्मेदार रहा और आज भी उसके खिलाफ कई रूपों में संघर्ष जारी है।

अंबेड़कर को वायसराय की काउंसिलिंग में 20 जुलाई, 1942 को बतौर श्रम सदस्य शामिल किया गया। वहां अपने चार साल (1942–1946) के कार्यकाल में उन्होनें कई महत्वपूर्ण कानून बनाये और कई पुराने कानूनों में बदलाव किए। यह उनकी देन है कि भारतीय श्रम कानून का स्वरूप न केवल बदला, बल्कि कहीं ज्यादा मानवीय हुआ और महिला श्रमिकों के लिए विशेष सुविधाऐं लागू कीं गई। कारखानों और खदानों में काम के घंटे घटाकर फिर से निर्धारित किए गये। स्त्री और पुरूष श्रमिकों के लिए समान वेतन के अधिकार का भी प्रावधान किया गया। छोटे बच्चों के लिए काम की जगह के आस–पास हीं पालनाघर बनाये गये। स्वास्थ्य और जीवन बीमा की शुरूआत की गई, सामाजिक सुरक्षा अधिनियम बनाया गया।

अप्रैल 1947 में डॉ अंबेडकर ने हिंदु कोड बिल का मसौदा तैयार कर संविधान सभा में रखा, जिस पर बहस होनी थी। यह बिल मुख्य रूप से संयुक्त या अविभाजित हिंदु परिवार में संपत्ति के अधिकार से संबंधित था। यह अगर उस वक्त पारित हो गया होता तो स्त्रियों को स्वतंत्र और आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में मील का पत्थर साबित होता और यही इस बिल की खासियत थी। इसमें स्त्रियों को अपनी मर्जी से विवाह और तलाक, पति से अलग रहने पर गुजारा भत्ता, गोद लेने (बच्ची को गोद लिये जाने) और बच्चों के संरक्षण का भी अधिकार दिया गया था।

स्वतंत्र भारत में जब अंबेड़कर को संविधान निर्माण का जिम्मा दिया गया, तो जैसी उनसे उम्मीद थी, उन्होनें जाति, धर्म और गोत्र के सारे बंधन तोड़कर सभी भारतीयों के लिए समता के अधिकार को प्राथमिकता दी। आज भारतीय संविधान अपनें सभी नागरिकों को समान अधिकार की गारंटी देता है, चाहे वह अंबानी हो या घरों में बर्तन मांज कर परिवार का पेट भरती स्त्रियां या फिर भीख मांग कर गुजारा करते लोग। खासतौर पर स्त्रियों के साथ किसी भी आधार पर भेदभाव को कानूनी तौर पर जुर्म माना गया है।

चार साल बाद कानून मंत्री के रूप में अंबेड़कर ने एक बार फिर हिंदु कोड़ बिल को संसद में रखा, लेकिन उनकी तमाम कोशिशें बेंकार हो गई यह बिल भारी मतों से पराजित हो गया। हिंदु कोड़ बिल का पराजित होना अंबेडकर की निगाह में उनकी निजी हार थी। स्त्री अधिकारों के प्रति वे कितनें संवेदनशील थे, इसका अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि हार के बाद उन्होने 27 नवंबर 1951 को कानूनमंत्री के पद से इस्तीफा दे दिया। तब से आज तक

इस बिल को कई टुकडों में पारित किया गया, लेकिन एक तरह से देखें तो 2006 में बनें घरेलू हिंसा कानून ने उनके सपने को पूरा किया।

उन्होनें समय–समय पर ऐसे कई आंदोलन किए, जिन्होनें हिंदु धर्म की जडों पर चोट की। 25 दिसंबर 1927 को उन्होंने महाड़ (महाराष्ट्र) में मनु स्मृति को जलाया था, जिसे हिंदु धार्मिक संविधान माना जाता रहा है जो दलितों और स्त्रियों की दुर्दशा के लिए जिम्मेदार था। उस वक्त यह ऐसा 'शॉक–ट्रीटमेंट' साबित हुआ जिससे हिंदुत्व की जडें हिंल गई और जिसने भारतीय समाज को यह सोचने पर बाध्य कर दिया कि धर्म से भी विद्रोह किया जा सकता है: तथा धर्म पत्थर पर लिखा फरमान नहीं है जिसे बदला नहीं जा सकता। इन्हीं हालात में दलितों और स्त्रियों के बीच धार्मिक बेडियाँ टूटी, अंधविश्वास के उद्धोग को भारी धक्का पहुंचा, शिक्षा और जागरूकता की शुरूआत हुई।

अंबेड़कर जानते थे कि वे जिस वर्ग के लिए संघर्ष कर रहे हैं वह सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक और राजनैतिक सब तरह से कमजोर है। उस स्थिति में लड़ना और जीतना कोई आसान काम नहीं है। यह एक चौतरफा लडाई थी जिसमें ताकतवर हिंदु धर्म रक्षक भी थे। लंबी चली लडाई में अंबेड़कर ने कई आंदोलन किए। मंदिर प्रवेश के मुद्दे पर उन्होने 1927 से 1930 के बीच दलितों के साथ नासिक के कालाराम मंदिर, पूना के पर्वती और अमरावती के अंबादेवी मंदिर में प्रवेश किया जहां उन्हें हिंसा का भी सामना करना पडा।

हिंदु धर्म से टक्कर अंबेडकर के लिये बेमानी थी लेकिन दलितों के बीच स्वाभिमान जगाने के लिए यह जरूरी था। 1929 में येउला के अधिवेशन में यह प्रस्ताव पारित किया गया कि दलितों को हिंदु धर्म में अत्याचार सहते रहनें की कोई आवश्यकता नहीं है, वे चाहें तो किसी भी धर्म में प्रवेश कर सकते हैं।

2 मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून उत्तराखंड

विचार–14 अप्रैल सन् 1891 को जन्में डॉ. भीमराव रामजी अंबेडकर जी की 124 वीं जयंती है। वह भारत के पहले कानून मंत्री रहे। भारत के संविधान का निर्माण व उसका प्रारूप तैयार करने में उनकी भूमिका प्रमुख थी। भारतीय रिजर्व बैक की स्थापना में भी उनका मुख्य योगदान था। वह दलितों, पिछडों, निर्धनों व दु:खियों के मसीहा थे। उन्होने जीवन में अनेकानेक महत्वपूर्ण कार्य किए जिनसे देश व समाज प्रभावित हुआ। बहुत से कार्य वह करना चाहते थे व चाहते होंगे परंतु उसमें उन्हें सफलता नहीं मिली। एक कार्य तो यह चाहते थे कि समाज से सामाजिक असमानता, छुआछूत, ऊंचनीच, छोटे–बडे की भावना समाप्त होकर सारा देश एक भाव, एक विचार, सर्व स्वीकार्य एक मत– धर्म, भाषा व जीवनशैली , सबका दुख सुख, व एक हानि– लाभ को स्वीकार करें व अपनाऐं। परंतु यह कार्य अब तक कुछ बडे लोगों के कारण सफल नहीं हो सका। आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानंद ने भी अपने साहित्य व शंका समाधान आदि में ऐसे हीं विचार व्यक्त किए थे कि ऐसा होने पर हीं देश व विश्व का पूर्ण हित हो सकता है व होगा। हिंदुओ की जन्म पर आधारित जाति व्यवस्था के बारे में सन् 1875 के आस–पास स्वामी जी नें कहा था कि ये ' वर्ण व्यवस्था आर्यों के लिये मरण व्यवस्था है। देखें इस डाकिन से आर्यों (हिंदुओं) का पीछा कब छूटता है?' हम समझते है कि देश में यदि छुआछूत न होती डॉ. अंबेड़कर जी देश व समाज के लिए और अधिक उपयोगी कार्य कर सकते थे। वह अपने जीवन में जितना कार्य कर सके उसके आधार पर उन्हे न्यायविद्, राजनेता, दार्शनिक, इतिहासकार तथा अर्थशास्त्री आदि अनेक विषयों से युक्त महान पुरूष कह सकते हैं। लगभग 63 वर्ष की आयु में ही उन्होने इतने कार्य किये हैं। इससे उनका जीवन आदरणीय, सम्माननीय, श्रद्धा व अनेकानेक पुरूषों के लिए प्रेरणा का स्त्रोत है।

महर्षि दयानंद ने जिस गुरूकुलीय शिक्षा व्यवस्था को अध्ययन, अध्यापन के लिए प्रस्तुत किया उसमें उनका कहना था कि राजा का पुत्र हो, या किसी निर्धन, दलित व पिछडे परिवार का, सबको समान आसन, समान भोजन, समान वस्त्र व अन्य सभी सुविधाऐं एक समान रूप से मिलनी चाहिए। यदि समानता नहीं होगी तो यह अधर्म व अनुचित कार्य है। यह कार्य उन्होने सन् 1875 में व्यक्त किए व अपनी प्रसिद्ध पुस्तक सत्यार्थ प्रकाश में लिखे हैं। आर्य समाज के इस समय लगभग 1500 से अधिक गुरूकुलों में इस व्यवस्था का पालन किया जाता है। जिसका परिणाम है कि आज वेदों के अध्ययन पर पण्डितों व ब्राम्हणों का एकाधिकार समाप्त होकर देश व समाज में दलित व पिछडे वर्गों से संबंधित अनेक वेदों के भाष्यकार, विद्वान व अध्यापक आदि महान आशय वाले लोग हैं।

आपने 1920 में 'मूक नायक' नामक पत्र प्रकाशित कर अशपर्शयता निवारण के क्षेत्र में बहुमूल्य योगदान दिया। कोल्हापुर के महाराजा शाहूजी (1874–1922) ने आपको इस कार्य व अन्य गतिविधियों में आर्थिक सहयोग प्रदान किया। यह ज्ञातव्य है कि शाहूजी आर्य समाज व आर्य विचारधारा के अनुयायी थे।

डॉ. अम्बेड़कर जी की भारतीय संविधान के निर्माण में प्रमुख भूमिका थी। वह पहले कानून मंत्री थे। उन्होनें कश्मीर से संबंधित विशेष दर्जा देने वाली धारा 370 का खुलकर विरोध किया था। इससे नेहरू जी उनको मना नहीं कर पाये थे। इससे उनके व्यक्तित्व का अनुमान होता है। छुआछूत का विरोध उन्होने किया। यह एक अमानवीय सामाजिक कुप्रथा थी जिसका महर्षि दयानंद सहित अनेक महापुरूषों ने विरोध किया। खेद है कि आज भी समाज में यत्र–तत्र इसके दर्शन होते है और जिन लोगों को इसका विरोध करना चाहिए, जिनके कारण यह विद्ममान है, वह विरोध नहीं कर रहे हैं। ऐसे लोगों को क्या कहा जाये? यह कैसा वैज्ञानिक युग व आधुनिक काल है कि अमानवीय कुप्रथा आज भी पूरी तरह से समाप्त नहीं हुई है। हमें लगता है कि आज की शिक्षित आधुनिक युवा पीढ़ी इसे आने वाले समय में समाप्त करेगी।

डॉ. भीमराव अंबेड़कर जी ने सामाजिक विषमता के विरूद्ध आंदोलन किया और अहिंसा को प्रधानता देने वाले बौद्धमत ग्रहण किया। आपको 1990 में भारत रत्न की देश की सर्वोपरी उपाधि प्रदान कर गौरवान्वित किया। आर्य समाज के शीर्षस्थ स्वामी विद्मानंद सरस्वती आपके प्रशंसक थे। आप दोनों में परस्पर मधुर संबंध थे। पौराणिकों व आर्य समाज में जब कभी कुछ विषयों पर मतभेद हुआ तो आपने आर्य समाज के विचारों का समर्थन किया।

उत्तर– अंबेडकर जयंती के अवसर पर भीमराव अंबेड़कर के व्यक्तित्व और कृतित्व की समीक्षा करने का समय है। मैं मानता हूँ कि डॉ. भीमराव अंबेडकर ने कुछ अच्छे कार्य भी किए हैं। लेकिन ठीक से समीक्षा की जाये तो अच्छे कार्यों की अपेक्षा बुरे कार्यों की सूची बहुत लंबी हो जाती है। डॉ. भीमराव अंबेडकर को बचपन से एक ब्राम्हण ने शिक्षा दी, यहाँ तक कि अमवेदकर नामक ब्राम्हण उनके शिक्षक थे जिनके नाम की नकल करते हुए भीमराव ने स्वयं को अंबेडकर कहना शुरू कर दिया। अंबेडकर जी को शिक्षा प्राप्त करने में तथा विदेश जाने में भी वहाँ के राजपरिवार ने पूरी–पूरी मदद की और यह राज परिवार न अवर्ण था न पिछडी जाति से। डॉ. अम्बेडकर प्रारंभ से हीं सवर्णों के प्रति कृतज्ञ थे। सवर्णों का विरोध करना उनकी मानसिकता नहीं थी बल्कि यह कार्य एक राजनीतिक रणनीति का हिस्सा था। डॉ. अम्बेड़कर महिला समानता के वास्तव में पक्षधर थे अथवा राजनीति के अंतर्गत ऐसा कर रहे थे यह इस बात से पता चलता है कि उनकी पत्नी मृत्यु के पूर्व एक बार धर्म स्थल का दर्शन करना चाहती थी किंतु अंबेडकर ने अपनी पत्नी को जाने से कडाई से रोक दिया क्योंकि अंबेडकर का मानना था कि उनकी पत्नी का धर्म स्थल जाने का समाज में गलत संदेश जाएगा। डॉ. अंबेडकर हिंदु धर्म से अलग होकर मुसलमान होना चाहते थे क्योंकि उनकी यह सोच रही होगी कि मुसलमान होने के बाद वे आसानी से भारत का विभाजन करा सकेंगे और नेतृत्व उनके पास होगा अन्यथा डॉ. अंबेडकर स्वयं जानते थे कि इस्लाम में हिंदुओं की अपेक्षा महिलाओं के प्रति ज्यादा भेदभाव होता है। जब गांधी जी नें अंबेडकर को ऐसा करने से कडाई से रोक दिया तब अंबेडकर ने प्रयत्न शुरू किए कि अवर्णं, शुद्रों और मुसलमानों का एक समूह बनाकर राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने की ओर बढ़ा जाये। आप दोनों विद्वानों ने अंबेडकर जी को समाज सुधारक के रूप में बताने का प्रयास किया है किंतु किसी ने यह नहीं बताया कि स्वतंत्रता संघर्ष उस समय सर्वोच्च प्राथमिकता थी या समाज सुधार। विदेशी कपडे जलाना उस समय अधिक आवश्यक था या मनुस्मृति? उस समय से लेकर आज तक कहीं भी मनु की व्यवस्था के अंतर्गत महिलाओं का वह स्थान नहीं है जैसा आप लोगों ने लिखा है अथवा अंबेडकर ने कहा है। समाज को धर्मों, जातियों, महिला पुरूष आदि वर्गों में बांटकर वर्ग संघर्ष कराने के अतिरिक्त पूरे जीवन में डॉ अंबेडकर ने कोई अच्छा काम किया हीं कौन सा है अथवा उनके अनुयायी आप भी इसके अतिरिक्त और क्या कर रहे हैं? स्वामी दयानंद ने जो किया उसके ठीक विपरीत अंबेडकर जी ने कार्य किये। अतः कम से कम स्वामी जी के साथ उनके नाम की तुलना मत कीजिये। डॉ. अंबेडकर ने स्वतंत्रता संघर्ष में कितना योगदान दिया और उन्होनें स्वतंत्रता संघर्ष के कालखंड में समाज में गिरोहबंदी करने में कितना समय लगाया, यह उनके जीवन से स्पष्ट होता है। डॉ. अंबेडकर जी ने हर उस व्यक्ति का विरोध किया जिसने वर्ग समन्वय की बात की, चाहे वह गांधी रहे हों या कोई अन्य। क्योंकि अम्बेडकर जी जानते थे कि वर्ग

संघर्ष हीं उन्हें लाभदायक स्थिति तक पहुंचा सकता है वर्ग समन्वय नहीं। अंबेडकर जी हिंदू धर्म से कभी घृणा नहीं करते थे बल्कि एक रणनीति के अंतर्गत वे हिंदू धर्म से प्रतिशोध की ज्वाला में जलते हुए दिखते थे। उन्होनें परिवारों कों स्त्री– पुरूष में बांटकर अलग–अलग देखने का काम किया। उन्होंने नाम तो समान अधिकारों का दिया किंतु काम में हमेशा समान अधिकारों का विरोध किया और विशेष अधिकारों का पक्ष लिया। स्पष्ट है कि विशेष अधिकार की मांग वर्ग संघर्ष में सहायक होती हैं और हर बंदर– बिल्लियों के बीच में बैठकर उनकी रोटी बराबर करने के नाम पर असंतोष की ज्वाला जलाये रखना आवश्यक समझता है। अंबेडकर जी को महात्मा गांधी तथा आर्य समाज द्वारा जाति प्रथा व छुआछूत के विरूद्ध में चलाये जा रहे आंदोलन से पूरा विरोध था क्योंकि यह आंदोलन जातिवाद और जाति प्रथा को कमजोर कर रहा था जो अंबेडकर जी के उद्देश्य में बाधक था।

अंबेडकर जी ने श्रमजीवियों के साथ बहुत बडा धोखा किया, उन्होने कोई ऐसा प्रयत्न नहीं किया जिससे श्रम की मांग बढे और परिणाम स्वरूप श्रम का मूल्य भी बढे। उन्होने जो भी प्रयत्न किये उसमें श्रम और बुद्धि के बीच की खाई को अधिकाधिक चौडा करने के लिए किए। दुनिया जानती है कि भारत में शूद्र और अवर्णों में 90 प्रतिशत श्रम प्रधान लोग हैं। अंबेडकर जी ने मुटठीभर बुद्धिजीवी अवर्णों और जन्मजात शूद्र बुद्धिजीवियों का आरक्षण के नाम पर सवर्ण बुद्धिजीवियों के साथ समझौता करा दिया तथा कर्म के अनुसार शूद्रों को अर्थात् श्रमजीवियों को अपने हाल पर जीने–मरने के लिए छोड़ दिया। आरक्षण दस वर्षों के लिए लागू किया गया था और सत्तर वर्षों के बाद भी यथावत् जारी है और भविष्य में भी जारी रहेगा क्योंकि यह बुद्धिजीवियों के लिए श्रमशोषण का एक हंथियार बना हुआ है। मैं समझता हूँ कि देश के अधिकांश बुद्धिजीवी चाहे वे अवर्ण हों या सवर्ण, सभी एकजुट होकर आरक्षण का भी समर्थन करते हैं और अंबेडकर के प्रति भी कृतज्ञ रहते हैं। मैं तो समझता हूं कि आप दोनो लेखक भी ऐसे हीं बुद्धिजीवियों में शामिल हो सकते हैं जिन्हें अंबेडकर जी के प्रयत्न से व्यक्तिगत लाभ पहुंचा हो भले हीं 90 प्रतिशत् श्रमजीवी कितनी भी खराब हालत में क्यों न जी रहे हों। हिंदु कोड बिल को पास कराना किसी भी दृष्टि से सामाजिक कार्य नहीं था किंतु अंबेडकर जी ने हिंदु धर्म के प्रति प्रतिशोध की भावना से इस बिल को जीवन– मरण का प्रश्न बना लिया है। उनको कानून मंत्री इसलिये नहीं बनाया गया था कि वे सब काम छोडकर एक काम के पीछे हीं सारी शक्ति लगा दें किंतु अंबेड़कर जी यदि कानून मंत्री बने थे तो केवल इस कार्य के लिये कि वे हिंदू समाज से प्रतिशोध ले सकें और जब उन्हे यह कार्य पूरा होते हुए नहीं दिखा तो उन्होंने वह पद छोड दिया किंतु अपना मिशन नहीं छोडा। अंबेडकर जी ने पत्नी की मृत्यु के बाद किसी ब्राम्हणी स्त्री से भी विवाह इसी भावना को हृदय में रखकर किया था। उनका मानना था कि महिलाऐं परिवार में नीचे होती हैं और मैं ऐसे नीचे स्थान पर एक ब्राम्हणी को स्थापित कर रहा हूँ। मैंने अंबेडकर जी के जीवन की बहुत समीक्षा की तो मैंने पाया कि उन्होनें जीवनभर हर जगह तोडनें का कार्य किया है जोडने का नहीं, और इसलिये मैं यह कह सकता हूं कि भविष्य में ऐसा भी कभी समय आएगा जब भीमराव अंबेडकर का नाम इतिहास में काले अक्षरों में लिखा जायेगा।

3 शंभुनाथ गुप्ता, होशंगाबाद म0प्र0 44687

विचार–मैं किसी राजनैतिक दल का सदस्य नही हूँ लेकिन महात्मा गांधी का एक अदना अनुयायी और लोक नायक जय प्रकाश नारायण के संपूर्ण क्रान्ति आंदोलन का एक सिपाही रहा हूँ । अपने देश की सांस्कृतिक परंपरा को जिस प्रकार मै समझता हूँ उसी अनुरूप आचरण करूं यह चाहता हूँ। मैं देख रहा हूँ कि चुनाव जीतने के लिये मोदी जी कुछ भी करने को आमादा रहे है। लेकिन समाज और देश पर इसका जो घटिया प्रभाव पड सकता है उसका प्रतिकार करना मेरा नागरिक कर्तब्य है इसलिये मोदी जी को यह पत्र लिख रहा हूँ।

मोदी जी आपने उत्तर प्रदेश मे भाषण देते समय कहा है कि देश का प्रधान मंत्री होने के लिये 56 इंच का सीना चाहिये। मोदी जी मैने वेद, उपनिषद्, गीता, रामायण, कुरान इत्यादि अनेक ग्रन्थों मे बहुत खोजा परन्तु दूर–दूर तक आपके बोले गये इस झूठ की झलक तक नही दिखी। महाभारत के यक्ष प्रश्न में युधिष्ठिर ने यह उत्तर दिया है कि यघपि अनेक ऋषि हुए है, जिनकी वाणी एक दूसरे को काटती है तो हम किसका अनुशरण करें। उन्होने कहा कि हमे उसी मार्ग पर चलना चाहिये जिस पर हमारे महापुरूष गये हैं। महाजनेन गत से पंथाः। मोदी जी आप झुठ बोलते हैं।

माननीय शरद पवार जी ने आपका मूल्यांकन करते हुए कहा कि आप पागल हो गये हैं और आपको इलाज की जरूरत है। मैं उनमे सहमत हूॅ। परन्तु उन्होने एक व्यक्ति के रूप मे आपका मूल्यांकन किया है। जो प्रधानमंत्री होने के लिये पागलपन की सारी सीमाऐं लांघ गया है। परन्तु यह पागल आया कहां से, इस पर उन्होने कोई विचार नही किया है। यह फर्क उन दो विचारधाराओ का है। एक भारत की समन्वयवाद परंपरा जो इस सृष्टि को ईश्वर से परिपूर्ण मानती है। सत्य और प्रेम को केन्द्र मानकर भारत अपनी सभ्यता के उषाकाल से लेकर आजतक उस पर चलता आ रहा हैं। महात्मा गांधी इस समूचे दौर में पहले व्यक्ति हुए जिन्होने इस विरासत को पंडितों, पादरियों, मुल्लाओं और मौलवियों की तिजारत से बाहर निकालकर सामान्य जनता का धर्म बना दिया। सत्य और अहिंसा के इस औजार से गांधी ने न केवल विदेशी सत्ता को हटाया, परन्तु भारत के गांव–गांव में सत्य और अहिंसा पर जीवन जीने वाले निर्भय शारीरिक श्रम और परोपकार का आचरण करने वालो की एक फौज खडी कर दी।

दुसरी विचारधारा राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की विचार धारा है जो हिटलर और मुसोलनी के फासीवाद पर आधारित है। यह विचारधारा सफलता पाने के लिये छल, कपट, झूठ सब जायज है यह मानती है। और यह भी मानती है कि किसी झूठ को बार बार बोला जाये तो सामान्य जनता उसे सच मान लेती है। इसी का परिणाम है जब भारत की समूची जनता गरीब हिन्दू और मुसलमान सब मिलकर आजादी की लडाई लड रहे थे तब राष्ट्रीय स्वयं संघ हिन्दू और मुसलमानो के बीच दंगे करवाकर अंग्रेजो की सेवा कर रहा था। मोदी जी, भारत की सांस्कृतिक गंगा मे राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की विचार धारा काई की तरह है । आप संघ की परंपरा के वाहक है। भारतीय परंपरा के नही। माननीय मोदी जी मैं किसी राजनैतिक दल में नही हूॅ, लेकिन इतना जानता हूॅ कि विचारधारा के रूप मे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस भारत की आत्मा है। राजनैतिक दल के रूप मे नही जिसमे अनेक विचार धाराओं के लोग देश की आजादी के लिये एक मंच पर एकत्र हुए थे। और पूरा आजादी का आंदोलन उन महान मूल्यो पर आधारित था जो भारत की सांस्कृतिक विरासत है। मोदी जी आपका वैचारिक स्तर इतना घटिया है कि आप प्रधानमंत्री पद के चुनाव को नगर पालिका के स्तर पर ले आये है। आपने अपने विरोधियो को गाली देने के अलावा अपनी आर्थिक आंतरिक और विदेशी नीति क्या होगी इसकी चर्चा कभी नही की। जवाहर लाल को संघ परिवार गाली देता है। सन 1930 मे जब आप पैदा भी नही हुए थे तब जवाहर लाल आजादी के आंदोलन मे नैनी जेल और कभी अहमदाबाद जेल से अपनी 13 वर्षीय स्कूल मे पढने वाली बेटी इंदिरा गांधी को पत्रों द्वारा देश और दुनियां का इतिहास उसकी समस्याएं और उनके हल बता रहे थे।

इसकी भाषा और हाव भाव कुछ इस प्रकार हैं जैसे सरदार पटेल संघ की शाखाओ मे पैदा हुए थे। और प्रधानमंत्री हो रहे थे जिनके खलनायक जवाहर लाल नेहरू ने सत्ता छीन ली। इतना बडा झूठ संघ परिवार प्रचारित करता है। जबकि इतिहास की सच्चाई है कि आजादी के आंदोलन मे एक समय महात्मा गांधी और सरदार पटेल एक साथ जेल में बंद थे। पटेल का इलाज गांधी जी ने किया था। गांधी जी यह जानते थे कि पटेल की बीमारी गंभीर है और उनका जीवन लम्बा नही दिखता। पटेल, जवाहर लाल जी से तेरह वर्ष उम्र मे बडे थे। गांधी जी अपने देश का इतिहास, उसकी समस्याओं, उसकी कमजोरियां और दुनियां के हालात जानते थे। गांधी जी जानते थे कि हजारो वर्ष गुलामी के बाद आजाद भारत बहुत जल्दी सत्ता परिवर्तन नही झेल पायेगा। जवाहर लाल नेहरू आजादी के आंदोलन के दौरान भारत की आंतरिक नीति और विदेशी नीति क्या होगी, इस पर पर्याप्त चिंतन कर चुके थें कांग्रेस उसके प्रस्ताव पर विचार कर चुकी थी। यह हकीकत है कि कांग्रेस संगठन पर सरदार पटेल की पकड थी और वे गांधी के आज्ञाकारी शिष्य थे। दूसरी ओर जवाहर लाल, गांधी से बहस करते थे लेकिन गांधी जी ने कहा कि मै यह घोषणा करता हूॅ कि जब मै नही रहूॅगा तब जवाहर लाल होंगे जो मुझसे बहस करते हैं। सरदार पटेल नही जो मेरा आज्ञाकारी शिष्य है। क्योंकि मैं जानता हूॅ कि जब मै नही रहूॅगा तब जवाहर लाल मेरी भाषा बोलेंगे। मोदी जी गांधी की शहादत के बाद राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ पर प्रतिबंध लगाने वाले देश के गृह और उप प्रधानमंत्री सरदार पटेल थे जवाहर लाल नेहरू नहीं।

मोदी जी आप संघ की शाखाओ की पैदाइश है। आप साध्य और साधन की पवित्रता मे विश्वास नही करते। लेकिन आप नही जानते कि सदाचार और सत्य की इमारत चोरी के धन से नही बनाई जा सकती। स्वाधीनता आंदोलन मे जमनालाल बजाज, घनश्याम दास विडला, अम्बालाल साराभाई जैसे उधोगपति गांधी के शिष्य बनकर देश के लिये

जेल जाते थे। और अपना धन देश हित में खर्च करते थे। आप अंबानियों और अडानी जैसे देश की प्राकृतिक संपदा लूटने वाले उद्योगपतियो के इशारे पर नाचते और उसके हवाई जहाज में झूमते हैं। मोदी जी आपका कद बहुत छोटा हे। अपने नाप का जूता पहनिये। जवाहर लाल और सरदार पटेल जैसी महान विभूतियों का नाम लेने लायक आपकी हैसियत नहीं है।

माननीय मोदी जी भारत का प्रधान मंत्री होने के 56 इंच का सीने की नही सरदार पटेल जैसी दृढता, जवाहर लाल जैसी दूरदृष्टि, विशाल हृदय, सोनिया गांधी जैसी तूफानों से टकराने की क्षमता और राहुल गांधी जैसी विनम्रता चाहिये। इनमे से कोई भी गुण आप में नही है। हो सकता है कि आपका सीना 56 इंच का हो लेकिन मेरा नहीं हैं यह मै जानता हूँ। इसलिये मोदी जी मै आपको और आपकी भारतीय जनता पार्टी को वोट नही दिया क्योंकि मुझे धर्म के नाम पर किसी तानाशाही के पैरों तले अपने देश का कुचला जाना मंजूर नही है। मैं नही चाहता कि मेरा देश पाकिस्तान बन जाये। मैं चाहता हूँ कि मेरा देश स्वाधीनता आंदोलन में प्रमाणित की गई भारतीय समन्यवादी परंपरा का वाहक बनकर सारी दुनिया को सत्य–अहिंसा और प्रेम का संदेश देता है।

उत्तर– आपके पूरे पत्र से ऐसा आभाष होता है कि आप कांग्रेसी न होकर सर्वोदय के कार्यकर्ता हैं क्योंकि कांग्रेस संघ को विरोधी मानती है, शत्रु नहीं और सर्वोदय संघ को शत्रु मानता है। छप्पन इंच का सीना कह देने मात्र से इतना लम्बा पत्र लिखने का कोई औचित्य नही था। ऐसे पत्र तो निराशा के वातावरण में मन की भड़ास निकालने के लिये ही होते है। ऐसी बाते लिखने वाले कोई पहले सर्वोदयी आप नहीं हैं। अन्य लोग भी अपनी–अपनी सीमा में ऐसे विचार रख रहे हैं।

भारत दो प्रकार की विचारधाराओं का संगम हैः 1. गांधी की विचार धारा 2. संघ साम्यवादी विचार धारा। दूसरे प्रकार की विचारधारायें उत्तरोत्तर समाज विरोधी दिशा मे बढती चली गई। गांधी की विचारधारा पूरी तरह हिन्दुत्व की मूल अवधारण से मेल खाती है। संघ परिवार की विचारधारा हिन्दुत्व से कहीं भी मेल नहीं खाती, बल्कि संघ की सोच इस्लाम और साम्यवाद के अधिक निकट है। किन्तु संघ इस्लाम और साम्यवाद मे बहुत फर्क होने से भले ही हम संघ की तुलना गांधी या हिन्दुत्व से न कर सके, किन्तु संघ की तुलना इस्लाम और साम्यवाद से भी नही की जा सकती। गांधी जी का जीवन और चिन्तन एक पूर्ण समाजशास्त्र है जबकि संघ की विचारधारा में समाज बिल्कुल नही है। उसमें धर्म भी नही है। किन्तु संघ परिवार इस्लाम तथा साम्यवाद के समान समाज विरोधी धारणा नही रखता।

इन दोनो के फर्क पर विस्तृत चर्चा आवश्यक है। गांधी विचार का मूल तत्व अहिंसा और वर्ग समन्वय है जबकि संघ इस्लाम और साम्यवाद का हिंसा तथा वर्ग विद्वेष। इन तीनो में भी हिंसा तथा वर्ग संघर्ष के प्रमुख आधार बनाने में साम्यवाद की सबसे ज्यादा रूचि है। इस्लाम की साम्यवाद से कम तथा संघ परिवार की इस्लाम से भी कम। हिन्दुत्व या गांधीवाद व्यक्ति के मौलिक अधिकारो को महत्वपूर्ण मानता है। जबकि अन्य तीनों मौलिक अधिकारों को या तो मानते ही नहीं या कम महत्व देते हैं। गांधीवाद या हिन्दुत्व कभी संगठन नही बनाता। आज तक न गांधीवादियों ने कोई संगठन बनाया न हिन्दुओं ने। संघ परिवार इस्लाम तथा साम्यवाद संगठन बनाने को सर्वोच्च महत्व देते है। गांधीवाद समाज को सर्वोच्च मानता हैं जबकि साम्यवाद राज्य को, इस्लाम धर्म को, संघ परिवार राष्ट्र को। इसी तरह गांधीवाद विश्व को एक परिवार मानता हैं जबकि संघ परिवार की सर्वोच्च इच्छा हिन्दू राष्ट्र इस्लाम की दारूल इस्लाम तथा साम्यवाद की पूंजीवाद की समाप्ति होती है।

गांधी के मरने के बाद गांधीवाद धीरे– धीरे समाप्त होता चला गया तथा उस अभाव का साम्यवादियों ने लाभ उठाया। कमजोर पडते साम्यवाद ने सर्वोदय में घुसपैठ की। दूसरी ओर नेहरू ने भी गांधीवादियों को संघर्ष का मार्ग छोडकर समाज निर्माण की राह पकडा दी। साम्यवादी जानते थे कि गांधी हत्या सर्वोदय के लोगो की मानसिक कमजोरी है। उन्होने संघ परिवार के विरूद्ध सर्वोदय को इस सीमा तक भडकाया कि पूरा का पूरा सर्वोदय संघ परिवार का शत्रु बन गया। सर्वोदय का मुख्य एजेंडा बन गया संघ विरोध। गांधी जी कार्य का विरोध करते थे कर्ता का नहीं किंतु सर्वोदय गांधी के इस विचार को भूल गया। यहां तक कि संघ विरोध के क्रम में सर्वोदय साम्प्रदायिक मुसलमान तथा साम्यवाद तक के साथ जुडता चला गया। जय प्रकाश जी के छोटे से कालखंड को छोडकर अन्य पूरे समय तक सर्वोदय इसी लाइन पर चलता रहा। उसने हर समय राजनीति से दूर रहने की बात की, यहां तक कि वोट देने

तक से परहेज किया, किन्तु गुजरात के विधान सभा चुनावो में खुलकर कांग्रेस की मदद की । हद तो तब हो गई जब सर्वोदय पूरी तरह साम्प्रदायिक मुसलमानों तथा साम्यवादियों की मदद करते– करते उनके आतंकवाद तक की ढाल बनने लगा। संसद पर आक्रमण के आरोपी गिलानी के आरोप मुक्त होते हीं सम्मानित करने की पहल सर्वोदय ने की तो नक्सलवादियो के प्रति भी सर्वोदय का नरम रूख रहा तथा अमेरिका के विरूद्ध भी वातावरण बनाने मे सर्वोदय की खास भूमिका रही। लगता है कि सर्वोदय विचारो की एक कडी क रूप में आपने यह पत्र लिखा।
आपने लिखा कि कांग्रेस पार्टी भारत की आत्मा हैं। मैं नही समझा कि आप किस कांग्रेस की बात कर रहे हैं? मुझे मालूम है कि स्वतंत्रता के तत्काल बाद ही गांधी जी ने कांग्रेस को भंग करके नया दल बनाने को कहा था लेकिन गांधी के मरने के बाद स्वार्थी कांग्रेसियो ने इसे जीवित रखा। कांग्रेस को जीवित रखने मे पंडित नेहरू का सर्वाधिक स्वार्थ था। उनके परिवार ने एक गिरोह बनाकर तीन– चार पीढियों तक सत्ता सुख भोगा। बडी मुश्किल से अब नरेन्द्र मोदी तथा संघ परिवार ने मिलकर एस खानदानी आरक्षण से देश को मुक्त कराया है। आपने आज तक सोनिया गांधी को कभी चिट्ठी नही लिखी कि वह भारत मे खानदानी शासन की जगह लोकतंत्र आने दे। भारत का मुसलमान डंके की चोट पर कहता है कि भारत में वही पार्टी जीत सकती है जिसके साथ मुसलमान होगा। पंडित नेहरू तथा अम्बेडकर ने मिलकर मुसलमानो और साम्यवादियो को खुश रखने के लिये एक ऐसा हिन्दू कोड बिल बना दिया जिसने भारत में रहते हुए हिन्दुओं को दूसरे दर्जे का नागरिक बना दिया। क्या आपने नेहरू, अम्बेड़कर के इस हिन्दू विरोधी कृत्य के लिये कभी पूछा? आपने महाजनों येन गत स पंथाः की उक्ति लिखी है। यह उक्ति उन लोगों पर लागू होती है जो सामान्यतया विचार मंथन द्वारा कोई निष्कर्ष नहीं निकाल पाते। इस उक्ति से अधिक प्रभावी उक्ति तो यह है कि मृत महापुरूषों के विचार भी बिना ठीक से समझे अनुकरण करना घातक होता है। क्योंकि विचार देते समय की देश काल परिस्थिति उनकी मृत्यु के बाद प्रायः बदल जाती है। किन्तु विचार दाता उस समय की देशकाल परिस्थिति के अनुसार आकलन करके संशोधन हेतु जीवित नहीं है।
यह सत्य है कि गांधी जी कथनी से करनी तक पूरी तरह धर्म निरपेक्ष थे । आज हमारे बीच गांधी नहीं हैं। जब तक कोई गांधी के समकक्ष सामने नहीं आता तब तक हमें वर्तमान लोगों में से हीं अपेक्षाकृत अच्छे– बुरे की पहचान करनी पडेगी। हो सकता है कि किसी एक व्यक्ति में एक गुण हो और दूसरा दुर्गुण जबकि दूसरे व्यक्ति में एक दुर्गुण हो और दूसरा गुण। ऐसी परिस्थिति में हमें तुलनात्मक रूप से विचार करके निर्णय करना पडता है। सरदार पटेल साम्प्रदायिक हिन्दुत्व की दिशा मे झुके हुए थे और नेहरू जी साम्प्रदायिक मुसलमानों की दिशा मे । गांधी दोनो को समझते थे किन्तु नेहरू और पटेल के बीच एक खास फर्क था कि पटेल की अपेक्षा नेहरू अधिक लोकतांत्रिक थे। नेहरू जी बालिग मताधिकार के पक्षधर थे और पटेल सीमित मताधिकार के। मै अब भी मानता हूॅं कि पटेल प्रधानमंत्री बनने योग्य नही थे और गांधी का निर्णय ठीक था । गांधी को यह नही पता था कि नेहरू परिवार कई पीढियो तक सत्ता की तिकडम करते रहेगा। गांधी को यह भी नही पता था कि भारत मे मुसलमानों को पहला हक घोषित करके हिन्दुओ को दूसरे दर्जे का नागरिक बना दिया जायेगा। इतने वर्ष बाद यदि नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व मे हिन्दू इस प्रकार गुलामी से मुक्त होना चाहता है, तो आप जैसे लोग साम्प्रदायिक शक्तियो के पक्ष मे चिट्ठी लिखते है। भारत आज तक वास्तव मे धर्म निरपेक्ष हो सका क्या? क्या भारत आज तक नेहरू परिवार की खान्दानी राजनीति से स्वतंत्र हो पाया? स्पष्ट है नहीं। ऐसी स्थिति में जब भारत को किसी साम्प्रदायिकता मे जीना ही मजबूरी है, यदि एक खानदानी सत्ता ही उसकी नियति बन गयी है तो भारत क्यो न हिन्दू साम्प्रदायिकता और संघ परिवार की तानाशाही का खतरा उठावे। मेरे विचार मे यदि आज गांधी होते तो या तो नेहरू खान्दान के अलोकतांत्रिक साम्प्रदायिक दृष्टिकोण का विरोध करते अथवा हम सबके समान ही एक खतरा उठाकर परिवर्तन की राह खोलते।
आपने गांधी को समन्वयवादी और संघ को प्रतिक्रियावादी कहा। मैं इन दोनो से सहमत हूॅं। प्रश्न यहां गांधी की तुलना का नहीं है। गांधी के बाद के सरसठ वर्षों के शासन मे भारत को वर्ग विद्वेष, वर्ग संघर्ष की दिशा मे बढाने मे संघ की कोई भूमिका नही थी। वर्ग निर्माण का कार्य पंडित नेहरू तथा अम्बेडकर की देन है। जिन्होने मुसलमानों, आदिवासियों, हरिजनों, महिलाओं, गरीबों आदि के नाम पर अलग–अलग वर्ग बनाये और वर्ग संघर्ष का मार्ग प्रशस्त किया। स्वतंत्रता के बाद आज तक क्या वर्ग समन्वय का कोई प्रयास हुआ? आपने लिखा है कि कांग्रेस भारत की आत्मा हैं तो क्या यदि गांधी जी की बात मानकर कांग्रेस को भंग कर दिया जाता जो भारत की आत्मा मर जाती?

क्या अब मोदी ने सरकार बनाकर सोनिया, राहुल से मुक्ति के दरवाजे खोल दिये तो भारत की आत्मा मर गई? संघ को शत्रु मानने का आशय ऐसी बे सिर– पैर की चापलूसी अच्छी नही।

मोदी प्रधान मंत्री बन गये है। अब देश हिन्दू–मुसलमान, पूंजीवाद– साम्यवाद आदि से उपर उठकर लोकतंत्र और तानाशाही के बीच नया मार्ग तलाश सकेगा। अब देश को किसी खानदान के साथ जुडना उसकी मजबूरी नही होगी। मेरा आपसे निवेदन है कि विरोध और चापलूसी के लिये इस तरह के पत्र लिखकर स्वयं को संदेह में मत डालें। यदि मोदी तानाशाही मार्ग पर चलते हैं तो देश मे कोई नया गांधी पैदा हो सकता है जो इन नकली गांधी नामधरियो से मुक्त होकर कुछ नये मार्ग तलाश सकेगा।

मेरा आपसे निवेदन है कि सर्वोदय की अब तक की घिसी–पिटी लाइन से हटकर आप संघ परिवार, इस्लाम और साम्यवाद के बीच तटस्थ समीक्षा शुरू करने की आदत डालिये। अब वह जमाना गया जब संघ को गाली देना ही धर्म निरपेक्षता का पर्याय था। अब तो वास्तविक नीतियो की चर्चा करनी होगी।

4 बेचू बी. ए. कुशी नगर, उत्तर प्रदेश 4295

प्रश्न–आपने जिस तरह से विषय 'ऐसा देश हो मेरा' के तहत जो 33 बिन्दुओ का छिद्रान्वेषण किया है उसमे एक–दो बिन्दुओं को छोड दिया जाये तो सभी के सभी विचारों से मैं सहमत नहीं हूॅं। मैं कहने मे काफी दुसाहस कर रहा हूॅं कि आप जैसा चिन्तनशील प्राणी इस तरह की सोच व अपने विचार समाज को देगा। ऐसी कल्पना न थी। अब तो ज्ञान तत्व पढना भी नही चाहता। ज्यादा कुछ और कहूॅं तो निश्चित आप नाराज होगे । इसके अलावा जो कुछ शेष था चलते चलते 290 वे अंक के पृष्ठ के 21 भाग मे पूरा कर दिये। यदि किसी पुरूष ने इन आधुनिक ....तो ये आधुनिक महिलाऐं इतने जोर से चिल्लाना शुरू कर देती हैं कि कोई इनके साथ बलात्कार हो रहा हो।

आदरणीय मुनि जी। जिस तरह से आपने 286 वे अंक मे यह लिखा है कि आपके कटु शब्दो से मेरे मन में आप के प्रति अच्छा ही संदेश जायेगा। तभी इतने कटु शब्दों का इस्तेमाल करने मे मै कोई गुरेज नही किया।

अगर यह सब ज्ञान तत्व मे आपके विचार है तो बहुत ही गलती है। जो 286 या 290 अंक में आप द्वारा जो भी विचार प्रकाशित हैं वह ज्ञानतत्व के लिये शर्मनाक है। उन शब्दो को बडे ठीक ढंग से दूसरे शब्दो मे लिखा जा सकता था। लेकिन ऐसा न कर सीधे–सीधे लाठी मारने का कार्य किये हैं। निश्चित उस अंक के विचारों से हजारों हजार पाठकों व लोगों की भावनाओं पर ठेस लगी है। यह अलग है कि तमाम पाठकों नें यह दुसाहस मेरे जैसे न किया हो और ना करें।

मैं और कुछ भी अपना मत देना चाहता था लेकिन ज्यादा विचार मे स्वयं विचारक विचरण करने लगता है और ऐसी मे ट्रेक बदल जाता है। हमे विश्वास नहीं है कि यह कटु पत्र आप अपने ज्ञान तत्व मे स्थान देगे ही, आखिर मैं एक प्रश्न के साथ अपनी बात समाप्त करूंगा कि एक महान विचारक व समाज सुधारक मुनि जी के वचन इस तरह के भी होते है।

इसके अलावा मैं परम् आदरणीय आचार्य पंकज जी को धन्यवाद् इसलिये देना चाहता हूॅं कि उन्होंनें भी समीक्षा देने की अपील किया है। इन्ही शब्दो के साथ मै कलम को विराम दे रहा हूॅं। अगर पत्र मे कोई ऐसी बात कह डाली गई हो, जिससे आपको कष्ट हुआ हो तो मैं क्षमा प्रार्थी हूॅं।

उत्तर– ज्ञान तत्व अंक 286 तथा 290 को पढकर आपकी भावनाओ को भारी ठेस लगी। यह अच्छी बात है। भावनाओं और विचारो के बीच टकराव हो तो विचार महत्वपूर्ण होते है। भावनाए नहीं। अंक 286 पढकर आपको ऐसा लगा कि अब ज्ञान तत्व पढना बंद कर दूं लेकिन मै जानता हूॅं कि आप ज्ञान तत्व पढना बंद नही करेंगे और आप अब भी पढ रहे है। यह अच्छी बात है।

आपने पूरे पत्र मे सिर्फ नाराजगी व्यक्त की है लेकिन यह कहीं नही लिखा कि मेरी लिखी हुई कौन सी बात क्यों गलत है? मैने जो कुछ लिखा है वह अंतिम नहीं है किन्तु उसमे कोई संशोधन आपकी या ऐसी ही कुछ साथियों की नाराजगी से नहीं होगा। आप चाहें तो इससे भी कई गुना कटु शब्द उपयोग कर लें लेकिन जब तक आपका कथन तर्क संगत नही होगा तब तक उसका कोई प्रभाव नही होगा।

हमारे अनेक पाठको ने अंक 286 की बहुत प्रशंसा की है। मैने किसी प्रशंसक का पत्र नही छापा। इससे आपको भ्रम हो गया कि हजारों हजार पाठको के मन को ठेस लगी है। मैं स्पष्ट कर दूं कि ज्ञानतत्व के अधिंकाश पाठक भावनाओ की जगह विचारो को महत्व देते है। आप जैसे इक्का– दुक्का पाठक हीं है जो इस तरह उद्वेलित होते हैं। मेरा आपसे आग्रह है कि मन को शान्त करिये। शान्त मन से वे बाते लिखिये जो आपके विचार से गलत हैं। आपने ज्ञान तत्व का एक अधूरा उद्धरण दिया है जिससे भ्रम होता है कि न लिखी गई बात कोई विशेष गलत होगी। मैं पूरा वाक्य लिख देता हूँ ' देखा जा रहा है कि अधिकांश आधुनिक महिलाऐं दिन रात महिला पुरूष अविश्वास बढाने के कार्य में लगी हैं। अच्छी– अच्छी विद्वान महिलाऐं भी आजकल सारी चर्चाऐं छोडकर महिला शोषण या जागरण के विषय में हीं कुछ अनाप– सनाप लिखती हैं और बोलती हैं। अनेक पुरूष विद्वान भी इनकी नासमझी में हाँ में हाँ मिलाते रहते हैं। यदि किसी पुरूष ने इन महिलाओं की बात के विरूद्ध कोई बात बोल दी , तो ये आधुनिक महिलाऐं इतनें जोर से चिल्लाना शुरू कर देती हैं जैसे कि कोई इनके साथ बलात्कार हो रहा हो।' मैं नहीं समझा कि उपर वाले वाक्य में गलत क्या है। मध्य प्रदेश के एक मंत्री कैलाश विजयवर्गीय के साथ क्या ऐसा व्यवहार नहीं हुआ। निर्भया कांड की चर्चा के समय राजस्थान के एक विधायक के साथ भी यही हुआ। हल्ला कर करके लोगों की स्वतंत्र आवाज बंद कर दी गई। ए टू जेड चैनल में होती बहस के बीच में भी ऐसी महिलाऐं आम तौर पर इसी तरह चिल्लाती देखी जा सकती हैं। आप लिखिये कि इस वाक्य में क्या गलत है और क्या असत्य है।

उत्तरार्ध

स्वराज्य स्थापना की ओर– (व्यवस्थापक का घोषणा पत्र)– श्री नरेंद्र सिंह, राष्ट्रीय सचिव– व्यवस्था परिवर्तन अभियान कमेटी

1. सदैव से हीं जब से व्यक्ति ने व्यवस्था शब्द का प्रभाव स्वीकार किया है और समाज में व्यवस्था की स्थापना के लिए राजनीति को माध्यम बनाया है, तभी से समाज तथा राजनीति के बीच अधिकारों की सीमा का द्वंद चलता रहा है। राजनीति स्वयं को समाज में व्यवस्था की स्थापना का माध्यम न मानकर उसकी स्थापना का कारण मानती रही है। मेरे विचार से समाज में अधिकारों के सीमांकन का स्वरूप ठीक नहीं है। लेकिन प्रश्न उठता है कि यदि समाज में व्यवस्था की स्थापना हेतु राजनीति का रूप स्वतंत्र नहीं होगा तो व्यवस्था की स्थापना किस प्रकार से हो सकेगी। मूलतः यह राजनीतिक व्यवस्था के दर्शन की विवेचना का विषय है। यह व्यवस्था के यथार्थप्रज्ञ स्वरूप को आकृति देने वाले उसके माध्यम की वास्तविकता का समाज से परिचय कराने का विषय भी है।
वास्तव में समाज को राजनीति के रूढ स्वभाव का परित्याग कर राजनीतिक व्यवस्था के संदर्भ में दर्शन के प्रभाव को स्वीकार करना होगा। क्योंकि समाज में व्यवस्था के माध्यम से हम जो व्यवस्था करते आये हैं उसमें व्यवस्था का प्रभाव आत्मनिष्ठ (स्वकेंद्रित) रहा है। जब कि व्यवस्था के विषय में समाज के परिप्रेक्ष्य को समझते हुए इसका स्वभाव वस्तुनिष्ठ (समाज केंद्रित) होंना चाहिए। शक्ति के केंद्रीकरण को अपनी उत्पत्ति का कारण एवं आदर्श के रूप में स्वीकार करने की राजनीति ने अपनी स्थिति को कभी भी वस्तुनिष्ठ प्रदर्शित नहीं किया है। इसका यह आत्मनिष्ठ (स्वकेंद्रित) स्वभाव ही युगों से जीवन की मूल स्वतंत्रता को रौंद रहा है और यह निश्चित है कि आने वाले समय में भी इसका यह स्वभाव समाज में संतुलित व्यवस्था की स्थापना का माध्यम नहीं बन सकेगा।
मेरे विचार से व्यवस्था शब्द का अभिव्यक्त सार यह है कि समाज अपने परिवेश में इसे इसलिये स्थापित करता है कि उसके जीवन–चक्र में सुगमता बनी रहे। वह प्रबंधित रहे। राजनीति को अपने प्रबंध के अधिकार सौंपने के पीछे समाज की केवल यही मंशा रही है। क्या राज्य की स्थापना की कल्पना, मूल रूप से व्यक्ति की इसी सोच के विस्तार का परिणाम नहीं है? मूलतः राज्य का शक्ति संग्रहण का सिद्धांत इसी विचार से उत्पन्न होता है। लेकिन समाज से अधिकार प्राप्त कर लेने के बाद राजनीतिक व्यवस्था के आत्मकेंद्रित स्वरूप ने समाज की इस आकांक्षा का सदैव हीं दलन किया है। वस्तुतः राजनीति अपने इस उच्श्रृंखल स्वभाव को नहीं नकार पायी कि समाज की गुलामी में हीं उसका अस्तित्व सुरक्षित है। यदि राज्य की व्यवस्था में लेश मात्र भी यह विचार प्रभावी होगा तो उसके माध्यम से स्थापित होने वाली व्यवस्था को किसी भी दृटिकोण से लोकतंत्रीय नहीं कहा जा सकता। राजनीति अपनी इसी

महत्वकांक्षा की खातिर समाज पर व्यवस्था के नाम से नियंत्रण करने के लिए विभिन्न प्रकार से प्रयास करती रही है। आधुनिक समाज में राजनीति द्वारा स्थापित लोकतंत्र का लोकानियुक्त स्वरूप भी समाज को इसी षडयंत्र के तहत अपने नियंत्रण में रखने का प्रयास है। हमें जीवन की मूल स्वतंत्रता की रक्षा के लिए समाज की व्यवस्था को राजनीति के षडयंत्र से मुक्त करना होगा।

व्यवस्थापक (जिसकी आकृति की विवेचना प्रस्तुत विषय के दूसरे बिंदु में की जा रही है) समाज में व्यवस्था के दर्शन की वह विवेचना प्रस्तुत करता है जिसके प्रभावित होने पर राजनीतिक व्यवस्था के स्वभाव से शासन भाव समाप्त हो जाएगा।

2. व्यवस्थापक क्या है?...........मूलतः भारत की मनीषा राजनीतिक व्यवस्था के ऐसे संस्थापक ढांचे की संकल्पना प्रस्तुत करती है जिसमे लेश मात्र भी व्यक्तिवाद अथवा संगठनवाद का प्रभाव नहीं। व्यवस्थापक की आधारीय संकल्पना प्रस्तुत करते हुए यहां पर इस सत्य की विवेचना कर देना भी उचित होगा कि मौजूदा भारतीय तंत्र का बुनियादी दोष यह है कि स्थापित व्यवस्था के ढांचे के अनुसार भारतीय लोकतंत्र को चलाने वाली ईकाईयों का विकास संस्थात्मक नहीं संगठनात्मक हुआ है। इन ईकाईयों में नाम मात्र की संवैधानिक स्वीकार्यताओं के अतिरिक्त इनकी व्यावहारिक कार्यनीति में तो सर्वथा लोकतंत्र का अभाव पाया जाता है। यह प्रभाव भारतीय संविधान के अधीन कार्य करने वाली तमाम व्यवस्थागत ईकाईयों के व्यवहार में अति स्तर तक परिलक्षित होता है। चाहे वे भारत की राजनीतिक पार्टियां हों, जो कि एक स्तर पर पहुँचकर विधायिका का निर्माण करती है, कार्यपालिका हो या न्यायपालिका हो। स्थापित व्यवस्था का तमाम ढांचा शक्ति के केंद्रीकरण का उद्यम करने के अतिरिक्त और कुछ नहीं करता। सभी घोर व्यक्तिवाद से ग्रस्त हैं और समाज पर अपनी स्थापना के लिए प्रतिबद्ध रहे हैं और हैं। ऐसी घोर अंधकारमय और जड़ परिस्थितियों में हम समाज के सामने 'व्यवस्थापक' की संरचना का वैचारिक आधार प्रस्तुत करते हैं। व्यवस्थापक की अवधारणा की उत्पत्ति अब से कुछ वर्ष पूर्व रामानुजगंज में सामाजिक समस्या अनुसंधान केंद्र द्वारा आहूत एक अनुसंधान कार्यक्रम के तहत हुई। इसकी संकल्पना प्रस्तुत करते हुए ज्ञान क्रांति परिवार के संरक्षक एवं समाज में स्वराज्य परक व्यवस्था की स्थापना के प्रबल पैरीकार श्री बजरंग मुनि ने कहा—' व्यवस्थापक का मुख्य उद्देश्य राष्ट्रीय स्तर पर ऐसे आंदोलन की रूप रेखा तैयार करना है जो स्वतंत्रता के तत्काल बाद हीं षडयंत्र पूर्वक जिन व्यवस्थापकों ने स्वयं को शासक, राज्य या गवर्मेंट मानना और कहना शुरू कर दिया उन सबको यह एहसास कराना है कि शासक, राज्य या गवर्मेंट तो समाज है। क्योंकि इसी में संप्रभुता का मौलिक रूप निहित है। यह स्थापित संविधानिक व्यवस्था जिसमें न्यायपालिका, विधायिका एवं कार्यपालिका शामिल हैं हमारी प्रबंधक हैं, प्रतिनिधि हैं। राज्य, शासक या गवर्मेंट नहीं किंतु न्यायपालिका या कार्यपालिका तो ऐसा आंशिक रूप से हीं समझते हैं पर विधायिका तथा उससे जुडे लोग तो अपनी छाती फुलाकर इसे सरकार कहते हैं। ' व्यवस्थापक देश में ऐसा आंदोलन खडा करेगा कि लोकतंत्रीय समाज में सत्ताग्राही राजनीति करने वाले लोग अथवा शासक स्वयं को सरकार की जगह प्रबंधक कहना भी शुरू कर दें तथा मानने भी लग जावें।

3. नाम— व्यवस्थापक की अवधारणा का अनावरण करते हुए श्री बजरंग मुनि ने कहा है कि व्यवस्थापक का वास्तविक नाम 'व्यवस्था परिवर्तन अभियान कमेटी' होगा तथा संक्षिप्त प्रचलित नाम व्यवस्थापक होगा।

4. संरचना का आधार— व्यवस्थापक एक सामाजिक संस्था होगी। जिसका संरचनात्मक ढांचा समाज की सामाजिक संरचना के आधार पर होगा। व्यवस्थापक के संरचनात्मक प्रबंध को प्रस्तुत करते हुए इसकी सैद्धांतिक अवधारणा की शुद्ध विवेचना करनी उचित होगी। एक सामाजिक अनुसंधान से हमें यह निष्कर्ष प्राप्त हुआ है कि समाज में मौलिक व्यवस्था की स्थापना समाज के विभिन्न स्तरीय निकायों के दो स्वरूपों की क्रमिक अवस्थापना के अनुसार होती है। जिनमें प्रथम और तार्किक क्रम है— व्यक्ति, परिवार, गांव अथवा शहर, जिला, प्रदेश, देश, समाज अथवा विश्व। यह क्रम समाज की मूलभूत ईकाईं से लेकर वैश्विक आधार पर प्रत्येक ईकाई के विस्तार का सामाजिक प्रारूप है। व्यवस्था की स्थापना का यह क्रम समाज में विभिन्न स्तरों पर आवश्यकता के अनुसार शक्ति विभाजन का मार्ग प्रशस्त करता है। क्योंकि इस क्रम की प्रत्येक व्यवस्थागत इकाई में उसकी व्यवस्था के अनुसार समाज की वास्तविक आकृति का समावेश होता है।...इस विषय से संबंधित दूसरा और रूढ़ क्रम है व्यक्ति, परिवार, कबीला अथवा कुटुम्ब, जाति, वर्ण, संप्रदाय व पंथ— वर्ग संघर्ष में उलझा हुआ देश व विश्वव्यापी स्तर का समाज। यद्यपि आधुनिक समाज में

यह क्रम भी परिवार, गांव, जिला, प्रदेश, देश, समाज के वास्तविक क्रम का किसी न किसी प्रकार आश्रय पाकर हीं जीवित रहता है। लेकन इसका मूल दोष यह है कि यह प्रकार समाज के आंतरिक ढांचे में विभिन्न लोगों के बीच अपने स्तर के अनुसार परस्पर अंतर विरोधों, रूढियों, वैचारिक जडताओं को अवसरवाद की धारणा के अनुसार पनपनें के अवसर उत्पन्न करता है। घटनावश या सत्ताखोर लोगों की नीयत खराबी के कारण समाज में व्यवस्था की स्थापना का दूसरा क्रम हमारे समाज के व्यवस्थागत ढांचे के निर्माण व निर्वहन का व्यावहारिक प्रतिनिधित्व कर रहा है। इसे समाज का दुर्भाग्य कहना हीं ठीक रहेगा कि हमारी संविधानिक व्यवस्था भी इस दूसरे विधिक क्रम को मान्यता प्रदान करती है। भले हीं वह सैद्धांतिक रूप से इस सत्य को नकारती हो। लेकिन मौजूदा सामाजिक ढांचे की बिना पर किया गया अनुसंधान राज्य के इस वक्तव्य को तर्कहीन सिंद्ध कर देता है। सामाजिक व्यवस्था तथा राज्यगत व्यवस्था के ढांचे से इस दूसरे तथाकथित क्रम के प्रभाव के उन्मूलन हेतु 'व्यवस्थापक' की संस्थात्मक संरचना समाज व्यवस्था के प्रथम व वास्तविक क्रम के आधार पर होगी। वस्तुतः समाज व्यवस्था के इस प्रथम क्रम का मौलिक गुण 'यथार्थ प्रज्ञता' है। यथार्थ प्रज्ञता जीवन में समावेश को बढावा देती है। इस सिद्धांत के प्रभाव से यह संस्था अपने जीवन काल में अथवा अपनी उत्पत्ति के कारण को सिद्ध करने तक व्यक्तिवाद तथा संगठनवाद की नीति को कभी स्वीकार नहीं कर सकेगी।